स्वामी विवेकानंद के दर्शन 'वसुधैव कुटुंबकम' का वर्त्तमान परिप्रेक्ष्य में आवश्यकता एवं महत्व

प्राप्तिः 22.05.2021
स्वीकृतः 16.06.2021

रश्मि कुमारी
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग,
तिलकामांझी, भागलपुर, विश्वविद्यालय, भागलपुर
ईमेलः krashmi784@gmail.com

सारांश

स्वामी विवेकानंद जी प्राचीन भारतीय संस्कृति के केवल मानने वाले ही नहीं बल्कि उनके सच्चे उपासक भी थे। उनके व्यक्तित्व और विचारों में भारतीय संस्कृति परंपरा के सर्वश्रेष्ठ तत्व निहित थे। उनका जीवन भारत के लिए वरदान था। उनके विचार चिंतन और संदेश प्रत्येक भारतीय के लिए अमूल्य धरोहर हैं तथा उनके जीवन शैली और आदर्श प्रत्येक युवा पीढ़ी के लिए प्रेरणा स्त्रोत हैं। वे धर्म के संबंध में किसी एक धर्म की प्राथमिकता नहीं देते थे, वे मानव धर्म के प्रति दृढ़ प्रतिज्ञ थे।

'वसुधैव कुटुंबकम' अर्थात् संपूर्ण विश्व एक ही परिवार है। यह कथन आज के संदर्भ में जितना सार्थक है उतना पहले कभी नहीं रहा। कोरोना वायरस के संक्रमण से उपजा मौजूदा संकट यही सिखाता है कि हमें अपने समान ही दूसरों की भी चिंता करनी चाहिए।

प्रस्तावना

अमूल्य रत्नों से परिपूर्ण जाज्वल्यमान भारत वसुन्धरा का आंचल कितना पवित्र, कितना सौभाग्यशाली और कितना अनोखा है यह किसी से छिपा नहीं है। यह रत्न गर्भ भारतभूमि अपने अन्तर में जहाँ असंख्य मणि–मुक्ताएँ छिपाए बैठी है वहीं उसके अंचल में समय–समय पर ऐसे नवरत्न पैदा हुए हैं जिनकी जीवन ज्योति से जगमगा उठा, जिन्होंने चट्टान बनाकर समय का प्रवाह रोक दिया, जो अमानवीय एवं अपावन विचारों ने घुटने टेक दिये। माँ भारती के ये अमर पुत्र अपने पूर्वजों की थाती सँभाल, अतीत का ज्योति–कलश ले साधना के पथ पर बढ़े तो पथ की बीहड़ता, उसका अन्धकार सबकुछ स्वंय में नष्ट हो गया। मंजुल आरती के लिए स्वागत में खड़ी मिली। उनका जीवन आज भी सफलता के सर्वोच्च शिखर पर पहुँचकर वह ज्ञान व ज्योति बिखेर रहा है। जिसके प्रकाश पर संसार सब कुछ न्योछावर करने को सन्नद्ध है। एसे विलक्षण पुरूष भारत में एक–दो नहीं हुए हैं, इनकी एक विशाल मलिका है।

इस दिव्य मलिका में एक ज्योतिर्मान रत्न है स्वामी विवेकानंद जी।

देश की राजनीतिक चेतना के साथ–साथ सांस्कृतिक तथा धार्मिक भावनाओं के विकास में अपना बलिष्ठ कन्धा लगाने वालों में महर्षि विवेकानंद का नाम विशेष रूप से स्मरणीय है। उन्होंने जनता को अनुद्योग, आलस्य अकर्मण्यता के स्थान पर उद्योग, परिश्रम और कर्मण्यता का पाठ पढ़ाया। धार्मिक कृत्यों में प्राचीन विचारधाराओं के स्थान पर आडम्बरपूर्ण अर्चना स्थान पर नवीन मानसिक पूजा को महत्व दिया। रूढ़िवाद की पुरातन छिन्न–भिन्न श्रृंखलाओं को नष्ट करके जनता

को धर्म के मूल तत्वों को समझाया। जाति, वैषम्य, अस्पृश्यता और भेदभाव से दुःखी हिन्दू जनता धर्म का परिवर्त्तन करती जा रही थी।

स्वामी जी ने जातिवाद और वैषम्यवाद की विचारधाराओं को समाज में जड़ सहित उखाड़ फेंक देने का सबल प्रयत्न किया।

स्वामी जी का जन्म 12 जनवरी 1863 को एक संपन्न बंगाली परिवार में हुआ। नरेन्द्रनाथ से स्वामी विवेकानंद बनने का सफर काफी प्रेरणादायी है। उनके गुरू रामकृष्ण परमहंस एक सिद्ध पुरूष थे उनकी छाप स्वामी जी के कार्यो से दृष्टिगोचर होती है। स्वामी जी एक महान दार्शनिक होने के साथ–साथ उत्कट शिक्षाविद भी थे। उनके पिता पाश्चात्य सभ्यता में भी विश्वास रखते थे। वे अपने पुत्र नरेन्द्र को भी अंग्रेजी पढ़ाकर पाश्चात्य सभ्यता के दर्रे पर चलाना चाहते थे। उनकी बुद्धि, बचपन से तीव्र थी और परमात्मा में व अध्यात्म में ध्यान था। स्वामी जी भारतीय समाज के लिए भगवान का सबसे बड़ा उपहार था।

डॉ० एस. राधाकृष्णण के अनुसार,

"स्वामी विवेकानंद एक संत व्यक्तित्व थे, जो केवल हिंदू धर्म और दर्शन के उच्चतम आदर्शों तक पहुँचने और अभ्यास करने के साथ संतुष्ट नहीं थे। उनका मकसद गरीबों और नीच लोगों की सेवा के माध्यम से भगवान की पूजा करना था और उन्होंने अपने देशवासियों और महिलाओं से आह्वान किया कि वे बुढ़ापे की सुस्ती को दूर करे, अपने समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करें और मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिये काम करें।"

स्वामी विवेकानंद सन् 1893 ई0 में विश्व भ्रमण पर निकल पड़े। अमेरिका के शिकागो नगर में सर्वधर्म सम्मेलन हुआ। वहाँ पर रोमन कैथोलिक ईसाइयों ने अपने धर्म को सर्वश्रेष्ठ सिद्ध करने के लिए इस धर्म सभा का आयोजन किया। उसमें संसार के सभी प्रमुख धर्मों के प्रतिनिधियों को बुलाया गया। स्वामीजी अमेरिका गये और धर्मसभा में सम्मिलित हुए।

उन्होंने वहाँ अपना भाषण, 'अमेरिकावासी भाइयों व बहिनों' कहकर शुरू किया। उनके भाषण से पाश्चात्य जगत के लोगों के हृदय में प्रथम बार मानव जाति के एकत्व की अनुभूति हुई। इनके भाषण से हिन्दू धर्म की विजेय पताका पाश्चात्य देशों में फहराने लगी। उनके आदर्शों से प्रभावित होकर अनेक शिक्षित लोग उनके कार्य में सहायता करने के लिये सन्यासी हो गये।

रामकृष्ण मिशन की स्थापना

स्वामी जी ने रामकृष्ण मिशन की स्थापना 1 मई, सन् 1897 को की थी। रामकृष्ण मूल रूप से अध्यात्मवाद और मानवतावाद पर आधारित हैं। इसके तीन प्रमुख कार्य हैं– प्रथम गरीबों की हर प्रकार से सहायता, द्वितीय वेदान्त और स्वामी रामकृष्ण की शिक्षाओं का प्रभावी ढंग से प्रचार तथा अन्तिम है जनकल्याण के लिए शिक्षा की व्यवस्था।

रामकृष्ण मिशन ब्रह्म समाज और आर्य समाज की तरह कोई हिंदुत्व का विशेष पंथ नहीं है और न कोई सम्प्रदाय है। यह एक संघ है जिनका मुख्य उद्देश्य वेदान्त धर्म का प्रचार तथा मानवता के कल्याण के लिए उपदेश देना है। संस्था का मुख्य उद्देश्य वेदान्त सम्बन्धी शिक्षा का प्रसार करना और निःस्वार्थ होकर हरिजन तथा निर्धनों की सेवा करना भी है। मानव सेवा और मानव कल्याण इसके धर्म हैं।

रामकृष्ण मिशन के प्रमुख उद्देश्य

- वेदान्त के अध्ययन एवं दर्शन का सन्देश घर–घर तक पहुँचाना।

- मानव सेवा और मानव कल्याण की भावना का प्रचार करना तथा व्यक्तियों को प्रेरित करना कि वे मानव सेवा कार्य में निःस्वार्थ भाव से भाग लेंगे।
- हरिजन तथा निर्धन व्यक्तियों की सेवा करना।
- कला, विज्ञान और औद्योगिक विषयों के अध्ययन की उन्नति तथा उनकी शिक्षा का प्रसार करना।
- विद्यालयों, कॉलेजों, अनाथालयों, कारखानों, प्रयोगशालाओं तथा अस्पतालाओं आदि की स्थापना, उनका संचालन तथा उनकी सहायता करना।
- शिक्षण कार्यों की उन्नति के लिए पुस्तक, पुस्तिकाओं का मुद्रण, प्रकाशन और विक्रय करना।
- मानवतावादी विचारों का प्रसार व प्रचार करना।

रामकृष्ण मिशन की कई सौ शाखाएँ आज भारत के सभी प्रदेशों में फैली हुई है। वे वेदान्त की शिक्षा के साथ ही स्कूल, कॉलेज, अस्पताल आदि चलाती हैं। भारत के अतिरिक्त बर्मा, श्रीलंका, फिजी, मॉरीशस, अमेरिका, दक्षिण अमेरिका, इंगलैंड और रामकृष्ण मिशन की शाखाएँ वेदान्त के प्रसार तथा संसार की भलाई का कार्य कर रही है।

राष्ट्रवाद पर स्वामीजी का विचार

स्वामीजी अपनी मातृभूमि के उत्थान के लिए जिस राष्ट्रवाद की कल्पना करते हैं, उसके मूल में मानवतावाद, आध्यात्मिक विकास और सांस्कृतिक नवजागरण है। वो एक ऐसे राष्ट्रवादी संत थे जिन्हें भारत की मिट्टी के कण–कण से प्यार था। उनका मानना था कि नैसर्गिक और स्वस्थ राष्ट्रवाद का विकास तभी होगा जब न सिर्फ धर्मों के बीच बल्कि पूर्व और पश्चिम की संस्कृतियों के बीच बराबरी का आदान–प्रदान हो।

उनके विचार भौगोलिक या राजनीतिक या भावनात्मक एकता पर आधारित नहीं थे न ही इस भावना पर कि हम भारतीय हैं। राष्ट्रवाद पर उनके विचार गहन आध्यात्मिक थे। उनके अनुसार, यह लोगों का आध्यात्मिक एकीकरण, आत्मा की आध्यात्मिक जागृति था। उन्होंने प्रचलित विविधता को विभिन्न आधारों पर पहचान और सुझाव दिया कि भारतीय राष्ट्रवाद पश्चिम की तरह पृथकतावादी नहीं हो सकता है।

उनके अनुसार, भारतीय लोग गहन धार्मिक प्रकृति के हैं और इससे एकजुट होने की शक्ति प्राप्त की जा सकती हैं। राष्ट्रीय आदर्शों के विकास से उद्देश्य और कार्यवाही में एकता प्राप्त की जा सकती हैं। उन्होंने करूणा, सेवा और त्याग को राष्ट्रीय आदर्शों के रूप में मान्यता दी। इसलिए उनका राष्ट्रवाद सार्वभार्मिकता और मानवता पर आधारित था।

यद्यपि आज भी दुनिया में राष्ट्रवाद हावी है। लेकिन व्यक्ति केवल अपने राष्ट्र के बारे में सोचता है, संपूर्ण मानवता के बारे में नहीं। आज मनुष्य धर्म जाति, भाषा, रंग, संस्कृति आदि के आधार पर इतना बँट चुका है कि वह सबके शांतिपूर्ण सहअस्तित्व के विचार को ही भूल चुका है। जगह–जगह पर हो रही हिंसा, युद्ध और वैमनस्य इसका प्रमाण है।

आज पूरा विश्व अलग–अलग समूहों में बँटा हुआ है, जो अपने–अपने अधिकारो और उद्देश्यों के प्रति सजग है, वैसे अगर देखा जाय तो सबका उद्देश्य विकास करना ही है। अतः आज सभी को वैर भाव को भुलाकर वसुधैव कुटुम्बकम की संस्कृति को अपनाने की आवश्यकता है,

क्योंकि सबके साथ में ही सबका विकास निहित हैं। यद्यपि कुछ राष्ट्र इस बात को समझते हुए परस्पर सहयोग बढ़ाने लगे, लेकिन अभी भी इस दिशा में बहुत काम करना बाँकी है। जिस दिन पृथ्वी के सभी लोग अपने सारे विभेद भुलाकर एक परिवार की तरह आचरण करने लगेंगे, उसी दिन सच्ची मानवता की सेवा होगी और वसुधैव कुटुंबकम का सपना साकार होगा।

आज के संदर्भ में वसुधैव कुंटुंबकम की सर्वाधिक आवश्यकता एवं महत्व

स्वामी जी ने वसुधैव कुंटुबकम के जिस दर्शन को पूरे विश्व को अवगत कराये थे, उसकी आवश्यकता आज सर्वाधिक है। उनका कहना था कि 'हम जितना अधिक लोगों की सेवा करेंगे उतना ही हमारा हृदय शुद्ध होगा। उन्होंने भारत की आध्यात्मिकता को वैश्विक स्तर पर पहुँचाया। स्वामी जी ने जब धार्मिक एवं सांस्कृतिक राजदूत के रू‍प में शिकागो में अपनी बातें रखी तो पूरा माहौल बदल गया। 'भाइयों एवं बहनों के' सम्बोधन से लेकर उन्होंने भारतीय संस्कृति की अवधरणा 'वसुधैव कुंटुबकम' की बात कहकर भारत को ऐसे देश में नई पहचान दिलाई, जहाँ भारतीय लोगों को आदर एवं सम्मान नहीं मिलता था। पश्चिमी सभ्यता के लोग भारतीय उदारता की कल्पना हीं नहीं कर सकते थे।

स्वामी जी ने श्लोक के माध्यम से परिचित कराया।

अयं: निजः परोवेति, गणना लघुचेताम्।।
उदार चरितानाम् तु वसुधैव कुंटुम्बकम्।।

यह मेरा है, यह पराये का है, यह संकीर्ण वृत्ति के लोगो की सोच हो सकती है लेकिन उदार चरित के लोगों के लिए पूरी वसुधा ही पूरा संसार ही एक परिवार की तरह हैं।

'वसुधैव कुंटुबकम' हम कहते हैं 'world is family' कुछ वर्ष पहले एक नया आयाम आया अन्तर्राष्ट्रीय जगत में वैश्वीकरण (globalization)] तो कुछ लोगों को लगने लगा कि भारत का जो 'वसुधैव कुंटुंबकम' था उसका एक और पर्यायवाची पश्चिम ने दे दिया। वैश्वीकरण ये ठीक है दोनों के केंद्र में विश्व है global जब शब्द आता है तो world (विश्व) आता है। जब वसुधा आती है 'वसुधैव कुंटुंबकम' में, समुची पृथ्वी ग्रह विश्व है लेकिन वो नहीं जानते कि दोनों के सिद्यांतों में कितना बड़ा अन्तर है। वैश्वीकरण के केंद्र में बाजार है, 'वसुधैव कुंटुंबकम' के केन्द्र में परिवार है और बाजार के केन्द्र में व्यापार है, परिवार के केन्द्र में प्यार है। बाजार में नफा, नुकसान होता है, परिवार में सम्मान होता है। बाज़ार में माल बिकता है, परिवार में मोह पलता है, बाजार में कलह होती है, परिवार में सुलह होती है, इतना बुनियादी अन्तर हैं वैश्वीकरण और वसुधैव कुंटुंबकम के बीच में।

इसलिए बाज़ार में देश होता है, परिवार में प्रेम होता है और इसी 'वसुधैव कुंटुंबकम्' के कारण ये प्रेम का प्रवाह, ये प्रेम की धारा, ये प्यार भारत सब ओर उड़ेलता है और जब भी कोई इस पावन भूमि पर आता है आने के बाद पहली मुलाकात में ही कहते हैं कि हमलोग तो आपके आतिथ्य से अविभूत हो गए हैं। ये प्रभाव है हमारी संस्कृति का, जो भारत की बहुत बड़ी ताकत है।

इसी संस्कृति का एक और महत्वपूर्ण पहले है सर्वजन हिताय एवं सर्वजन सुखाये जो सबके हित के लिए सबके सुख की बात करता है। कुछ समय पहले अंतर्राष्ट्रीय जगत में एक तुफान आया है 'संरंक्षणवाद' का जिसके केन्द्र में केवल 'में' है।(I, me and myself) (मैं, मेरा और मुझको) लेकिन भारत अपनी संस्कृति के माध्यम से कहता है 'मैं' नहीं 'हम*] (we, us and usself)

और जब we की बात करता है तो 'all' की बात करता है, क्यों करता है 'मैं' हमने भी कहा लेकिन क्या कहा 'आत्मवत सुर्वभूतेषु' मैं मतलब जैसा 'मैं' हूँ सभी प्राणियों का मैं उस जैसा देखूँ। आत्मवत 'मैं' मेरे जैसा, मैं जैसा हूँ 'सर्वभूतेषु' सब को वैसा ही देखूँ।

अगर मैं सभी प्राणियों को एक जैसा देखता हूँ, अपने जैसा देखता हूँ तो संरंक्षणवाद की जगह ही नहीं रह जाती। क्योंकि मैं और दूसरा प्राणी अगर एक है तो मैं किसको Protect करूँगा, अगर खुद को Protect करूँगा तो उसको भी Protect करूँगा, अगर अपने लिए सुरक्षा मुहैया कराऊँगा तो उसके लिए भी कराऊँगा, अपने लिये खाना तय करूँगा तो उसके लिए भी तय करूँगा। ये है भारत की संस्कृति, और जो भारत की बहुत बड़ी ताकत है।

हाल हीं में कुछ समय पहले UNG में राष्ट्रपति ट्रंप ने यह बात कही थी कि मेरा नारा है 'me first'। भारत की ओर से विदेश मंत्री सुषमा स्वराज भारत का प्रतिनिधित्व कर रही थी। उस समय एक बहुत छोटे देश के विदेश मंत्री ने कहा, मुझे पहले ये बताइये राष्ट्रपति ट्रंप ने आज कहा 'me first' अगर सबलोग 'me first' कहने लगेंगे तो में कहाँ जाऊँगा। मेरे देश में तो ताकत नहीं हैं, नहीं आज अपने लोगों को कोई सुविधा मुहैया कराने की, अगर आप सब 'me first' कहने लगेंगे तो मेरा क्या होगा? मेरे लोगों का क्या होगा? उन्होंने कहा भारतीय संस्कृति 'me first' वाली नहीं है। उन्होंने कहा मेरा भाषण आप कल सुनेगें उसमें होगा 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' और जब सब सुखी हों तो सबके लिए खाने का प्रबंध होगा, सब के लिए सुरक्षा का प्रबंध होगा।

ये सोच है हमारी सांस्कृतिक विरासत का, यह सोच है हमारी सांस्कृतिक परंपरा का और इसलिए आज के संदर्भों में हम जिस अदृश्य घातक विषाणु से प्रस्त हैं ऐसी परिवेश में भी हम केवल अपने–अपने लिए नहीं सोचते, अपनों के लिए नहीं सोचते, हममें जो जुड़े हुए हैं, कहीं भी हैं, हम उनके लिए भी सोच रहे हैं और हम सकल मानवता के लिए भी सोच रहे हैं, पुरे विश्व में जहां कहीं भी जीव–समुदाय हैं, प्राणिमात्र के लिए सोच रहे हैं, सब सुरक्षित रहे, सब सुखी रहे ये भाव है हमारी संस्कृति का।

अतः उनका चिंतन एवं दर्शन सांमजस्यपूर्ण और साकारात्मक है। आज जो माहौल है वो लगता है कि उनके विचार और उनकी जीवनदृष्टि इनमें सर्वाधिक प्रांसगिक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. *आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन* : डॉ0 वी. पी. वर्मा, प्रकाशकः लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, पृ0 **183**
2. *शिक्षा के दार्शनिक सिद्धांत* : डॉ0 रामशकल पाण्डेय, प्रकाशकः अग्रवाल पब्लिकेशन, पृ0 **384**
3. *विवेकानंद की आत्मकथा* – शंकर, प्रकाशक, प्रभात प्रकाशन, पृ0 **345**
4. *विवेकानंद की एक सचित्र जीवनी,* प्रकाशकः स्वामी स्वानन्द अध्यक्ष, अद्वैत आश्रम मायावती, पिथौरागढ़, हिमालय संस्करण, पृ0 **41**
5. *स्वामी विवेकानन्द जीवन एवं विचारः* डॉ0 सन्तोष कुमार महर्षि, प्रकाशक–नेहा पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, पृ0 **4**
6. *शिक्षा के दार्शनिक सिद्धांतः* डॉ0 रामशकल पाण्डेय, प्रकाशकः अग्रवाल पब्लिकेशन, पृ0 **386–409**
7. *स्वामी विवेकानंदः व्यक्ति और विचारः* राजेन्द्र प्रसाद गुप्त (1997); प्रकाशकः राधा पब्लिकेशन–पृ**0 60**
8. स्वामी निखिलानंद (2005*) 'विवेकानंद एक जीवनी'* प्रकाशकः स्वामी बोधसारानन्द, अध्यक्ष अद्वैत आश्रम मायावती, चम्पावत, उत्तरांचल कोलकाता, संस्करण–प्रथम, पृ0 **35**